कश्मीर समस्या शेख मोहम्मद अब्दुल्ला की भूमिका

प्रदीप कुमार
रिसर्च स्कॉलर
इतिहास विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक(हरियाणा)

ABSTRACT

शेख मोहम्मद अब्दुल्ला (जन्म 5 दिसम्बर, 1905 मृत्यु 8 सितम्बर, 1982) एक भारतीय राजनीतिज्ञ था, जिसने जम्मू– कश्मीर की राजनीति व इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। अपनी तरह के इस 'शेर–ए–कश्मीर' ने नैशनल कांफ्रेस पाटी की स्थापना की थी तथा तीन बार कश्मीर सरकार के मुखिया का पद भी संभाला था। उसने अपनी विरासत की नींव कश्मीर के महाराजा हरिसिंह के शासन को हिलाकर रखी थी।

शेख अब्दुल्ला, कश्मीर के भारत में विलय के पश्चात् जम्मू–कश्मीर राज्य का ऐसा पहला प्रधानमन्त्री था। जो जेल भी गया तथा बाहर भी निकला । उसे प्रधानमंत्री के पद से 8 अगस्त, 1953 को बर्खास्त कर दिया गया तथा बक्सी गुलाम मोहम्मद को नया प्रधानमन्त्री नियुक्त कर दिया गया। उसी के द्वारा (शेख अब्दुल्ला) 1965 में 'सरदार–ए–रियासत' व 'प्रधान–मन्त्री' के पद नामों को बदलकर क्रमशः 'गवर्नर' व 'मुख्यमंत्री' कर दिया गया।[1]

शेख अब्दुल्ला ने अपने जीवन में कश्मीर को बुराईयों तक पहुचाने में कोई कसर नही छोड़ी इसके उपरान्त पीछे कोई विरासत न होने के बावजूद भी कश्मीर राज्य के मुखिया के पद तक पंहुचने में सफल रहा, जिसे की कम उपलब्धि नही कहा सकता।

प्रारम्भिक जीवन

शेख मोहम्मद अब्दुल्ला का जन्म कश्मीर के बाहरी इलाके के शौरा नामक गांव मे हुआ था तथा उसके पिता की मृत्यु उसके जन्म से ग्यारह दिन पहले ही हो चुकी थी। उसके पिता शेख मोहम्मद इब्राहिम एक माध्यम वर्ग के कश्मीरी व्यापारी थे।

शेख अब्दुल्ला के द्वारा स्वय लिखी हुई आटोबायोग्राफी 'आतिश–ए–चिनार' के अनुसार उनके पूर्वज कश्मीरी पंडित थे जिनका नाम 'रधोराम कोल' था। जोकि 1722 में इस्लाम ग्रहण कर मुसलमान बन गए थे तथा साथ ही उन्होनें अपना धर्म व नाम भी बदल लिया था।

शेख अब्दुल्ला के अनुसार, उनका बचपन बहुत गरीबी में बीता तथा उसने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा एक (पारम्परिक स्कूल) मदरसे से ही प्राप्त की थी। जहाँ पर उसने 'कुरान' व फारसी उल्लेख 'गुलिस्ता–ए–समी', बोस्तां, पादशाहनामा आदि पवित्र किताबों का ज्ञान प्राप्त हुआ। 1911 में उसे एक प्राईमरी स्कूल में भेजा गया जहां पर वह दो वर्ष तक पढ़े। उसे स्कूल जाने के लिए प्रतिदिन 10 मील तक पैदल जाना पड़ता था। शेख अब्दुल्ला ने अपनी दसवी कक्षा, पंजाब युनिवर्सिटी से 1922 में पास की थी। [2]

उच्चतर शिक्षा

दसवी की कक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् उन्हें कश्मीर के अग्रणी कालेज ' श्री प्रताप कॉलेज' में दाखिला मिला इसके साथ–2 वे जम्मू के 'प्रिंस ऑफ वेल्स कॉलेज' में भी पढ़े हुए है। उन्होंने अपनी स्नातक की डिग्री लाहौर के 'इस्लामिया कॉलेज' से प्राप्त की थी। उसके बाद 1930 में अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी से 'रसायनशास्त्र' में मास्टर डिग्री भी प्राप्त की। अपने कॉलेज के दिनों में ही उनमें एक काबिल राजनेता के गुण दिखने लगे थे। उसी समय के 'सिल्क फैक्टरी विरोध प्रदर्शनों' ने शेख अब्दुल्ला पर गहरा प्रभाव डाला तथा उसे कश्मीर के लोगों की आवाज बनने के लिए भी प्रेरित किया।[3]

राजनीतिक सफर

अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी में पढ़ते समय ही शेख अब्दुल्ला उदारीकरण व प्रगतिशील के विचारों में शामिल हुए तथा साथ ही उन्होनें यह भी सोचा कि कश्मीर के लोगों की ऐसी दुर्दशा के लिए 'एक तन्त्र शासन' (राजा शाही शासन) ही जिम्मेदार है अतः दुनिया के अन्य देशों की तरह यहां भी प्रजातन्त्र से चुनी हुई सरकार होनी चाहिए, तभी कश्मीर का विकास हो सकता है।

मुस्लिम कांफ्रेस दल का गठन

शेख अब्दुल्ला व उसके सहपाठी मौलवी अब्दुल्ला के भाषणों से बहुत प्रेरित हुए तथा मौलवी अब्दुल्ला का पुत्र मौलवी अब्दुल रहमान, शेख अब्दुल्ला व गुलाम नबी गिलकर, तीनों ही पहले शिक्षित कश्मीरी युवा थे, जो कि 1931 के आम–जन विरोध प्रर्दशनों के कारण गिरफ्तार हुए थे।

16 अक्तूबर, 1932 को शेख–अब्दुल्ला के प्रतिनिधित्व मे 'कश्मीर मुस्लिम काफ्रेंस' नामक दल का गठन किया गया। तथा इस पर शेख अब्दुल्ला के द्वारा यह भी कहा गया था कि 'कश्मीर मुस्लिम काफ्रेंस' दल द्वारा समाज के सभी शोषित वर्गों की आवाज उठाने व उन्हें उनका अधिकार दिलाना ही, उनका परम उद्देश्य रहेगा। साथ ही उन्होनें यह भी कहा कि यह एक साम्प्रदायिक पार्टी नही है। अतः उन्होंने बड़ी ही चतुराई के साथ मुस्लिमों की पार्टी बनाने के बावजूद भी इसे अन्य धर्मो में बटने नही दिया तथा साथ ही इस सांझा मंच से हिन्दू , सिक्ख व मुस्लिम तीनों को ही इंसाफ दिलाने का वादा कर कश्मीर में महाराजा के खिलाफ मुसलमानों को इक्ट्ठा करना शुरू कर दिया। इस तरह उन्होनें अपने राजनैतिक जीवन की शुरूआत इसी मुस्लिम काफ्रेंस नामक दल के आधार पर शुरू कि तथा कामयाब भी रहे। इस तरह कुछ समय उपरान्त जून, 1939 के 'मुस्लिम काफ्रेंस' के विशेष अधिवेशन में उन्होनें इसका नाम बदलकर 'नेशनल काफ्रेंस' कर दिया जिसमें कुल 176 सदस्यों में से 172 ने इसे सहमति भी प्रदान कर दी थी।[4]

प्रजा सभा

1931 के विरोध प्रदर्शनों के परिणामस्वरूप महाराजा हरिसिंह के द्वारा बी0जे0 ग्लैक्सी0 की अध्यक्षता में एक ग्रीवेन्स कमेटी का गठन किया गया, जिसमें 1932 में सौंपी रिर्पोट के अनुसार एक Elected Legislative Assembly (प्रजा सभा) के गठन का सुझाव दिया। इस कमेटी के सुझाव के परिणामस्वरूप प्रजा सभा का गठन किया गया जिसमें कि कुल सदस्यों में 33 चुने हुए व 42 नामित सदस्यों को चुना गया, जोकि हिन्दू व मुसलमानों के अलग–अलग चुनाव क्षेत्रों से चुने गए थे। अतः इसका पूर्ण रूप से गठन 1934 में जाकर हुआ था। साथ ही इस सभा के चुनावों में भाग लेने की भी शर्ते निर्धारित की गई थी। जो कि निम्न हैः–

1. औरतें व पढ़े–लिखे पुरुष जिनके पास अच्छी–खासी जमीन जायदाद हो।
2. राजा या अंग्रेजों द्वारा कोई उपाधि दी गई हो ।
3. जिन परिवारों की सालाना आमदनी 400 रुपये से ज्यादा हो।

वे ही इस सभा में चुनने वाले सदस्यों के लिए वोट डाल सकते थे। अतः देखा जाये तो इन नियमों के अनुसार इसमें केवल कश्मीर की लगभग 10 प्रतिशत प्रजा ही वोट डाल सकती थी।[5]

कमीशन के अनुसार 1934 में प्रजा मंडल का गठन तो कर दिया गया परन्तु फिर भी सारी शक्तियाँ राजा के पास ही थी। इसके 17 वर्षों के पश्चात् 1951 में शेख अब्दुल्ला के प्रतिनिधित्व में ही राज्य के चुनाव करवाए गए, जिसमें 'व्यस्क मताधिकार' का हक दिया गया।[5]

कश्मीर छोड़ों आदोंलन (प्रर्दशन) :

सन् 1946 में शेख अब्दुल्ला के द्वारा महाराज हरिसिंह के खिलाफ 'कश्मीर छोड़ों आदोंलन' शुरू कर दिया गया तथा इसी के कारण उन्हें गिरफ्तार कर तीन साल के लिए जेल में डाल दिया गया लेकिन 16 माह के उपरान्त 29 सितम्बर, 1947 को वह जेल से छोड़ दिए गए।

शेख–अब्दुल्ला व जवाहर लाल नेहरू की मुलाकात पहली बार 1937 में हुई थी, उस समय श्री जवाहर लाल नेहरू भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अग्रिम नेता भी थे तथा इसी तरह की मांग (भारत छोडो) उनके द्वारा समस्त भारत के लिए भी की जा रही थी।[6] अर्थात इसी आशय के आधार पर शेख अब्दुल्ला ने (महाराजा कश्मीर छोडों) आन्दोलन की पूर्ति हेतु `All India States Peoples Conference' की स्थापना भी की थी, ताकि इसमें देशी रियासतों के अलावा राजे–रजवाड़ों की प्रजा को भी इस आदोलंन में शामिल किया जा सके व उन्हें भी नई बनने वाली सरकार में बराबर का प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। लगभग समान उद्देश्य व विचार होने के उपरान्त (शेख अब्दुल्ला व जवाहर लाल नेहरू) दोस्त बने परन्तु कुछ समय उपरान्त दोनों व्यक्तियों की नीति में अन्तर भी देखने को मिला।

आपातकालीन प्रशासन में मुखिया के तौर पर शेख–अब्दुल्ला

महाराजा हरिसिंह ने लार्ड माऊटबेंटन, गर्वनर जनरल ऑफ इंडिया से अनुरोध किया कि भारतीय सेना से मदद दिलवाई जावे। इसके पश्चात् तमाम घटनाक्रम होने के उपरान्त 26 अक्तूबर, 1947 को भारत में शामिल होनें वाले 'विलय पत्र' पर हस्ताक्षर करते हुए महाराजा हरि सिंह ने लिखा कि "जब तक कश्मीर में अंतरिम सरकार की स्थापना नहीं हो जाती, तब तक शेख अब्दुल्ला को आपातकाल के समय में प्रधानमंत्री की सभी जिम्मेदारियाँ संभाल लेनी चाहिए।

इसी पत्र के जवाब में लार्ड माऊटबेटन ने महाराजा के 'विलय–पत्र' को स्वीकार करते हुए लिखा कि "साम्राज्ञी ने चाहा है कि जम्मू–कश्मीर में अग्रिम सरकार बनाने के लिए शेख–अब्दुल्ला को आमंत्रित किया जाए। इसके अलावा महात्मा गांधी व प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के साथ के कारण ही शेख अब्दुल्ला इस पद पर पहुँच पाए थे। अतः उनके द्वारा 30 अक्तूबर, 1947 को आपातकालीन प्रशासन के मुखिया के तौर पर शपथ ली गई।[7]

पाकिस्तानी दृष्टिकोण

सन् 1947 की पाकिस्तानी सरकार ने अब्दुल्ला व उसकी पार्टी को नेहरू का एजेंट माना व कश्मीर की लीडर शीप को मान्यता नही दी। शेख के द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में भी पाकिस्तान के विरूद्ध बोला गया वहां की सरकार की तुलना उसके द्वारा हिटलर से की थी, लेकिन समय के साथ पाकिस्तान का सुर बदल गया। जब 1964 में शेख अब्दुल्ला पाकिस्तान गया तो उसे पलकों पर बैठाया गया। कभी अपनी किताब 'कशमकश' में उसे (शेख अब्दुल्ला) एक डरपोक व भगौड़ा कहने वाले चौधरी गुलाम अब्बास, जो उनके पुराने सहपाठी थे, उन्होंने इस समय उनकी काफी तारीफ भी की तथा शेख को उप–महाद्वीप के मुसलमानों का रक्षक की कहा। यही नही राष्ट्रपति अयूब खान व तात्कालीन विदेश मन्त्री जुल्फीकार अली भुटटो के साथ कश्मीर समस्या पर चर्चा भी की। यहाँ यह भी महत्वपूर्ण है कि अब तक शेख कश्मीर को अलग देश बनाकर उसका मुस्लिम शासक बनने का सपना भी देख रहा था तथा उसके स्वपन को पूर्ण करने में पाकिस्तान ही उसका मददगार साबित होता।

गिरफ्तारी व रिहाई

8 अगस्त, 1953 को सदर–ए–रियासत (राज्य का सवैधांनिक मुखिया) डॉक्टर कर्ण सिंह (जोकि भूतपूर्व महाराजा हरिसिंह के पुत्र थे) ने उन्हें प्रधान–मन्त्री पद से बरखास्त कर दिया तथा उनपर आरोप लगाया गया कि उनके द्वारा कैबिनेट का विश्वास खो दिया गया है तथा उनके कैबिनेट मन्त्री बक्शी गुलाम

मोहम्मद को प्रधानमंत्री बनाया गया। इसके तुरन्त बाद 'कश्मीर षड़यत्र केस' के तहत राज्य के खिलाफ साजिश रचने के आरोप में शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार कर लिया गया तथा 11 वर्ष के लिए जेल में डाल दिया गया।

8 अप्रैल, 1964 को राज्य सरकार के द्वारा 'कश्मीर षड़यत्र केस' के सभी चार्ज वापिस ले लिए गए तथा शेख–अब्दुल्ला आजाद कर दिया गया।

अब तक शेख अब्दुल्ला कश्मीर को एक अलग राष्ट्र बनाने का सपना देख चुका था तथा 1964 तक पाकिस्तान भी समझ चुका था कि यदि उसे कश्मीर दोबारा हासिल करना है तो उसका रास्ता शेख–अब्दुल्ला ही है। यद्यपि नेहरू जी ने एक बार फिर शेख पर भरोसा जताया तथा उसे भारत–पाकिस्तान के रिश्तों को पटरी पर लाने की जिम्मेदारी दी गई। शेख ने इस बार भी पाकिस्तान जाकर अपने रास्ते ढूढ़ने की कोशिश की तथा साथ ही उसे जनरल अयूब खान का साथ भी मिला। शेख के रिश्ते लगातार पाक अधिकृत कश्मीर में बने रहते थे। यहाँ तक कि जब भारत के प्रधानमन्त्री श्री नेहरू की मृत्यु हुई तब वे PoK के मुजफफराबाद में रैली को सम्बोधित करने जा रहे थे तथा समाचार मिलने के बावजूद भी रैली में गए, सम्बोधित किया व उसके बाद वापिस आए थे, जो कि उनके पाकिस्तानी प्रेम का सूचक है। लेकिन यदि हम देखे तो नेहरू ने ही उन्हें जमीन से उठाकर यहां तक पहुचाया था। लेकिन शेख अब्दुल्ला ने हमेशा स्वार्थपूर्ण नीति ही अपनाई।[8]

भारत पाकिस्तान युद्ध व बाग्लादेश का उदय

26 मार्च 1971 को शेख मुजबिल रहमान के द्वारा बाग्लादेश की आजादी की घोषणा कर दी गई तथा इसी बीच पूर्वी पाकिस्तान में बाग्लादेश व पाकिस्तान के मध्य युद्ध छिड़ गया। जिसमें पाकिस्तान द्वारा सभी आजादी चाहने वालो का सरेआम कत्ल किया गया। जिसमें कुछ दिनों के पश्चात भारत को भी शामिल होना पड़ा क्योंकि पूर्वी पाकिस्तान से लगातार शरणार्थी भारत में आ रहे थे तथा पाकिस्तानी हुकुमत अपनी

गलतियों को न मानकर युद्ध के पीछे भारत की साजिश मान रही थी। इसी कारण पूर्व के साथ–2 पश्चिमी मोर्चे पर भी युद्ध छिड़ गया था। इसी युद्ध के परिणामस्वरूप नए राष्ट्र बाग्लादेश का जन्म हुआ था।[9]

शेख–अब्दुल्ला जो कि ऐसी स्थिति का फायदा उठाने के चतुर था, वह इस सब घटनाक्रम को बहुत गहराई से देख रहा था। उसने पाकिस्तान के पुराने राग – जनमत सग्रंह को ही अपना राग बना लिया।[10] तथा इसी हथकंड़े के द्वारा दोबारा से मुख्यमन्त्री की गद्दी पर बैठने की सोचने लगा। यद्यपि अब तक जनता व भारत सरकार समझने लगे थे कि यह सब सियासी चाल है तथा इन सब हथकंड़ों को अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान का समर्थन भी प्राप्त हो रहा था। इस प्रकार यदि देखा जाए तो युद्ध के संकट में भी शेख अब्दुल्ला ने प्रत्येक कदम अपने निजी फायदे के लिए ही सोचा न कि देश के लिए।

शेख अब्दुल्ला व कश्मीर

उपरोक्त घटनाक्रम के बाद शेख अपनी चालों के दम पर दोबारा मुख्यमंत्री पद तक पहुंचने में सफल रहा व अब भारत सरकार की सख्ती के कारण उसने पाकिस्तान का मोहरा बनने से तौबा कर ली। परन्तु फिर भी कश्मीर को अलग देश बनाने का उसका सपना तो था ही।

8 सितम्बर सन् 1982 को उसकी मृत्यु हो गई तथा उनकी राजनीतिक विरासत के रूप में डॉ0 फारुख अब्दुल्ला ने मुख्यमन्त्री पद की शपथ ली।

शेख अब्दुल्ला के द्वारा माइकल हैरी नूडो की बेटी अकबर जहाँ के साथ शादी की गई थी। जोकि उस समय भारत में होटल चेन का मालिक था तथा मूलरूप से वह एक यूरोपीयन था।

शेख अब्दुल्ला जो कि एक मध्यम वर्ग के परिवार से सम्बन्धित थे तथा उनका बचपन बहुत ही गरीबी में बीता था। यह सब उसने अपनी आत्मकथा 'आतिश–ए–चिनार; में लिखा है लेकिन इसके विपरित आज

यह परिवार इतना धनवान कैसे हो गया, यह एक चिता का विषय है तथा इन सब मे कश्मीर के लोगों का भोलापन व भरोसा भी शामिल है।

यद्यपि शेख अब्दुल्ला एक चतुर व साहसी व्यक्ति था, जिसने एक स्थापित राजा के साम्राज्य को चुनौती दी थी लेकिन व अपनी धर्म में बाटंने की नीतियों के कारण कश्मीर को कभी न खत्म हो सकने वाले बिंदु दे गया।

संदर्भ

- तहरीक–ए–हुरियत–ए कश्मीर बाई रशीद तशीर वाल्यूम–2
- आतीश–ए–चिनार अब्दुल्ला शेख, टैग एम वाई (1985)
- वही
- आतिश–ए–चिनार–1931 एजिटेशन, मुस्लिम काफ्रेंस चैप्टर–18
- आतिश–ए–चिनार–1931 एजिटेशन, आल इंडिया स्टेटस्ट पिपूल्स काफ्रेंस, चैप्टर–31
- जोसेफ कारबेल डेन्जर इन कश्मीर, प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रैस
- ए. जी. नुरानी, "नेहरू लिगेसी इन फोरन अफेर्यस
- बाबा प्यारेलाल बेदी, शेख अब्दुल्ला हिज लाइफ एण्ड आईडलस
- लेफ्टिनैन्ट कर्नल भगवान सिंह "पॉलटिकल कानप्रैंसी ऑफ कश्मीर"